

रूपेश

471

विपरीतप्रत्याङ्गिरा स्तोत्रम्



‘शिव’ ग्रन्थमाला : ग्रन्थाङ्क - ४

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

अथवा

विपरीतप्रत्यङ्गिराविधानम्

‘शिवदत्ती’ भाषाटीकाऽलङ्कृतम्

टीकाकार :

आचार्य पण्डित श्रीशिवदत्त मिश्र शास्त्री

सम्पादक- पण्डित पुनीत मिश्र

प्रकाशक :

रूपेश ठाकुर प्रसाद प्रकाशन

सन् २००५ ई.]

कचौड़ीगली, वाराणसी - २२१००१

[मूल्य: २०/-]

दो शब्द

शुद्ध पुस्तक से शुद्ध पाठ-पूजा और अनुष्ठान करने से ही पाठकर्ता साधक तथा यजमान का कल्याण एवं शीघ्र फल प्राप्ति सम्भव है। पाठ के साथ पाठ करने वाले को अर्थानुसन्धान भी होना आवश्यक है। इससे देवताओं में पूर्ण श्रद्धा-भक्ति जागृत होती है। इन सभी बातों को ध्यान में रखकर ही मैंने प्रस्तुत स्तोत्र का यथा-साध्य शुद्ध एवं हिन्दी टीका के साथ आधुनिक ढंग से संशोधन-सम्पादन कर सर्वोत्तम संस्करण निकालने की चेष्टा की है।

इसमें सर्वप्रथम विनियोग, करन्यास, हृदयादिन्यास, दिग्बन्धन और जप के लिए विपरीत प्रत्यङ्गिरा मन्त्र का उल्लेख है। तत्पश्चात् विपरीत प्रत्यङ्गिरा साधन का विधान और स्तोत्र है। इसके पाठ एवं जप से साधकों को शीघ्र सिद्धि प्राप्त होती है और शत्रुओं का विनाश होता है।

अक्षय नवमी

—शिवदत्त मिश्र शास्त्री

११ नवम्बर १९९५ ई.



ध्यानम्

टङ्कं कपालं डमरुं त्रिशूलं सम्बिभ्रती चन्द्रकलावतंसा ।
पिंगोर्ध्वकेशा-ऽसित-भीमदंष्ट्रा भूयाद् विभूत्यै मम भद्रकाली ॥

* श्रीविपरीतप्रत्यङ्गिरायै नमः *

आचार्य-पण्डित श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिसंस्कृतं

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

‘शिवदत्ती’ भाषाटीकाऽलङ्कृतम्

विनियोगः— ॐ अस्य श्रीविपरीत-प्रत्यङ्गिरामन्त्रस्य भैरव-
ऋषिः, अनुष्टुप्-छन्दः, श्रीविपरीतप्रत्यङ्गिरा देवता, ममाऽभीष्ट-
सिद्ध्यर्थे जपे पाठे च विनियोगः।

विनियोग— दाहिने हाथ में जल लेकर, ‘ॐ अस्य श्रीविपरीतप्रत्य-
ङ्गिरामन्त्रस्य’ से ‘जपे पाठे च विनियोगः’ तक मन्त्र पढ़ कर, भूमि पर या
किसी पात्र में जल छोड़े।

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

करन्यासः— ॐ ऐं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः। ॐ श्रीं मध्यमाभ्यां नमः। ॐ प्रत्यङ्गिरे अनामिकाभ्यां नमः। ॐ मां रक्ष रक्ष कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ मम शत्रून् भञ्जय भञ्जय करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

करन्यास— ‘ॐ ऐं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः’ से दोनों अँगूठे का स्पर्श करे, ‘ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः’ से दोनों अँगूठे की बगल वाली अँगुली का स्पर्श करे, ‘ॐ श्रीं मध्यमाभ्यां नमः’ पढ़ कर बीच की अँगुली को छुए। ‘ॐ प्रत्यङ्गिरे अनामिकाभ्यां नमः’ कह कर बीच की अँगुली के बगल वाली अँगुली का स्पर्श करे, ‘ॐ मां रक्ष रक्ष कनिष्ठिकाभ्यां नमः’ से कानी अँगुली का स्पर्श करे। ‘मम शत्रून् भञ्जय-भञ्जय करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः’ से दोनों हाथों की हथेलियों और उनके पृष्ठ भागों का स्पर्श करना चाहिए।

इसी प्रकार हृदयादिन्यास भी करे। ‘ॐ ऐं हृदयाय नमः’ से हृदय,

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

हृदयादिन्यासः- ॐ ऐं हृदयाय नमः। ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा। ॐ श्रीं शिखायै वषट्। ॐ प्रत्यङ्गिरे कवचाय हुम्। ॐ मां रक्ष रक्ष नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ मम शत्रून् भञ्जय भञ्जय अस्त्राय फट्।

दिग्बन्धः- 'ॐ भूर्भुवः स्वः' इति दिग्बन्धः।

'ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा' से सिर, 'ॐ श्रीं शिखायै वषट्' से शिखा, 'ॐ प्रत्यङ्गिरे कवचाय हुम्' से दोनों हाथों की भुजाओं और 'ॐ मां रक्ष रक्ष नेत्रत्रयाय वौषट्' से दोनों नेत्रों का स्पर्श करे। फिर 'ॐ मम शत्रून् भञ्जय भञ्जय अस्त्राय फट्' पढ़ कर दाहिने हाथ की तर्जनी और मध्यमा अँगुली से बायें हाथ से ताली बजा देवे।

पश्चात् 'ॐ भूर्भुवः स्वः' मन्त्र पढ़ कर सभी दिशाओं में चुटकी बजा कर दिग्बन्धन करें।

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

मन्त्र:- ॐ ऐं ह्रीं श्रीं प्रत्यङ्गिरे मां रक्ष रक्ष मम शत्रून्
भञ्जय भञ्जय फे हुं फट् स्वाहा।

अष्टोत्तरशतं चाऽस्य जपं चैव प्रकीर्तितम् ।
ऋषिस्तु भैरवो नाम छन्दोऽनुष्टुप् प्रकीर्तितम् ॥ १ ॥
देवता दैशिका रक्ता नाम प्रत्यङ्गिरेति च ।
पूर्वबीजैः षडङ्गानि कल्पयेत् साधकोत्तमः ।
सर्वहृष्टोपचारैश्च ध्यायेत् प्रत्यङ्गिरां शुभाम् ॥ २ ॥

मन्त्र- 'ॐ ऐं ह्रीं श्रीं प्रत्यङ्गिरे मां रक्ष रक्ष मम शत्रून् भञ्जय भञ्जय
फे हुं फट् स्वाहा' यह भगवती प्रत्यङ्गिरा के जप का मन्त्र है।

एक सौ आठ बार जप करे। इसके भैरव ऋषि हैं और अनुष्टुप् छन्द
है तथा देवता दैशिका, रक्ता और प्रत्यङ्गिरा देवी हैं॥१॥ साधक को
चाहिए कि, पूर्वोक्त बीज युक्त षडंगन्यास के साथ जप करे तथा प्रसन्नचित्त

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

ध्यानम्

टङ्कं कपालं डमरुं त्रिशूलं

सम्बिभ्रती चन्द्रकलावतंसा ।

पिंगोर्ध्वकेशोऽसित-भीमदंष्ट्रा

भूयाद् विभूत्यै मम भद्रकाली ॥ ३ ॥

एवं यथोचित सामग्री से प्रत्यङ्गिरा देवी का इस प्रकार ध्यान करो॥२॥

ध्यान- 'टङ्कं कपालं' से लेकर 'मम भद्रकाली' तक ध्यान का श्लोक पढ़े, जिसका अर्थ है-

तलवार, खड्ग, डमरू, त्रिशूल और चन्द्रहास को धारण की हुई, उठे हुए पीले केश वाली एवं भयंकर काले दाँतों वाली भद्रकाली मेरा कल्याण करें॥३॥

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रमेकविंशतिवासरान् ।
 शत्रूणां नाशने ह्येतत् प्रकाशोऽयं सुनिश्चयः ॥४॥
 अष्टम्यामर्धरात्रे तु शरत्काले महानिशि ।
 आराधिता चेच्छ्रीकाली तत्क्षणात् सिद्धिदा नृणाम् ॥५॥
 सर्वोपचारसम्पन्न - वस्त्र - रत्न - फलादिभिः ।
 पुष्पैश्च कृष्णवर्णैश्च साधयेत् कालिकां वराम् ॥६॥

इस प्रकार ध्यान करके इक्कीस दिन तक 'ॐ ऐं ह्रीं श्रीं प्रत्यङ्गिरे मां
 रक्ष रक्ष मम शत्रून् भञ्जय भञ्जय फे हुँ फट् स्वाहा' इस मन्त्र का एक सौ
 आठ बार जप करे। शत्रुओं के नाश करने में यह मन्त्र निश्चित रूप से
 सिद्धिप्रद कहा गया है॥४॥ शारदीय नवरात्र की महानिशा सम्बन्धित
 अष्टमी के अर्धरात्रि में श्रीकाली का आराधन करने से साधक को तत्क्षण
 सिद्धि प्राप्त होती है॥५॥ साधक को चाहिए कि समस्त पूजन-सामग्री

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

वर्षादूर्ध्वमजं मेघं मृदं वाऽथ यथाविधि ।
 दद्यात् पूर्वं महेशानि! ततश्च जपमाचरेत् ॥७॥
 एकाहात् सिद्धिदा काली सत्यं सत्यं न संशयः ।
 मूलमन्त्रेण रात्रौ च होमं कुर्यात् समाहितः ॥८॥
 मरीच - लाजा - लवणैः सार्षपैर्मरिणं भवेत् ।
 महावनपदे चैव न भयं विद्यते क्वचित् ॥९॥

सहित वस्त्र, रत्न और फल आदि तथा कौआठोठी के पुष्प से श्रेष्ठ श्रीकाली का पूजन करे॥६॥

इस प्रकार एक वर्ष तक जप करने के पश्चात् भेड़ एवं बकरी के बच्चे की यथाविधि बलि प्रदान करे। उसके बाद पुनः जप करे॥७॥ इस प्रकार करने से श्रीकाली एक दिन में ही निःसन्देह सिद्ध हो जाती हैं। रात्रि में अत्यन्त सावधान चित्त हो मूल मन्त्र से हवन करे॥८॥ काली मिर्च, लावा, नमक और सरसों से

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

प्रेतपिण्डं समादाय गोलकं कारयेत् ततः ।
 मध्ये नामाङ्कितं कृत्वा शत्रुरूपांश्च पुत्तलीम् ॥१०॥
 जीवं तत्र विधायैव चिताग्नौ जुहुयात् ततः ।
 तत्रायुतजपं कुर्यात् त्रिरात्रं मारणं रिपोः ॥११॥

हवन करने से शत्रु निश्चय ही मृत्यु को प्राप्त होता है और साधक को घनघोर जंगल में भी किसी प्रकार का भय नहीं रहता अर्थात् वह निर्भय रहता है ॥९॥

जिस पर मारण करना हो, उसके निमित्त प्रेत के पिण्ड से गोलक यंत्र बना कर तथा उसमें शत्रु का पुतला बना कर, उसके मध्य में शत्रु का नाम लिखे तथा प्राणप्रतिष्ठा कर चिता की अग्नि में उसे हवन करे। तीन दिन तक मूलमंत्र के दस हजार जप करने से शत्रु का मारण होता है तथा उस शत्रु को इस बात का ज्ञान होता है कि, मुझे कोई तपे हुए ताँबे की शलाका (सलाई) से छेद रहा है और मेरे शरीर से भयंकर ज्वाला उत्पन्न

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

महाज्वाला भवेत्तस्य तप्तताम्रशलाकया ।
 गुदद्वारे प्रदद्याच्च सप्ताहान् मारणं रिपोः ॥१२॥
 प्रत्यङ्गिरा मया प्रोक्ता पठिता पाठिता नरैः ।
 लिखित्वा च करे कण्ठे बाहौ शिरसि धारयेत् ।
 मुच्यते सर्वपापेभ्यो नाऽल्पमृत्युः कथञ्चन ॥१३॥

हो रही है। इसी प्रकार उस पुत्तल के गुदा में सात दिन तक जप करने से शत्रु का मारण होता है॥१०-१२॥

मैंने प्रत्यङ्गिरा स्तोत्र का निरूपण किया, उसे साधकों ने अपनाया। इस प्रत्यङ्गिरा (मन्त्र) को भोजपत्र पर लिख कर कलाई, कण्ठ, भुजा और मस्तक पर धारण करे। जिससे साधक समस्त पापों से मुक्त होता है तथा अल्प मृत्यु का ग्रास कभी भी नहीं बनता॥१३॥

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

ग्रहा ऋक्षास्तथा सिंहा भूता यक्षाश्च राक्षसाः ।

तस्य पीडां न कुर्वन्ति दिवि भुव्यन्तरिक्षगाः ॥१४॥

चतुष्पथेषु दुर्गेषु वनेषूपवनेषु च ।

श्मशाने दुर्गमे घोरे सङ्ग्रामे शत्रुसङ्कटे ॥१५॥

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ कुं कुं कुं मां सां खां चां लां क्षां ॐ ह्रीं
ह्रीं ॐ ॐ ह्रीं वां धां मां सां रक्षां कुरु। ॐ ह्रीं ह्रीं ॐ सः हुं

इसको धारण करने से समस्त ग्रह, रीछ, सिंह, भूत, यक्ष, राक्षस और आकाश, पृथ्वी तथा अन्तरिक्ष में विचरण करने वाले समस्त गण उसे किसी प्रकार की पीड़ा नहीं पहुँचा सकते॥१४॥

वह चौराहा, किला, वन, उपवन, भयंकर श्मशान तथा घोर युद्ध एवं शत्रुओं से घिर जाने पर भी विचलित नहीं होता॥१५॥

ॐ क्षौं वां लां धां मां सां रक्षां कुरु। ॐ ॐ हुं प्लुं रक्षां कुरु।

ॐ नमो विपरीतप्रत्यङ्गिरायै विद्याराज्ञि त्रैलोक्यवशङ्करि तुष्टि-
 पुष्टि-करि सर्वपीडापहारिणि सर्वापन्नाशिनि सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये
 शिवे सर्वार्थसाधिनि मोदिनि सर्वशास्त्राणां भेदिनि क्षोभिणि तथा
 परमन्त्र-तन्त्र-यन्त्र-विष-चूर्ण-सर्व-प्रयोगादीनन्येषां निर्वर्तयित्वा
 यत्कृतं तन्मेऽस्तु कलिपातिनि सर्वहिंसा मा कारयति अनुमोदयति
 मनसा वाचा कर्मणा ये देवाऽसुर-राक्षसास्तिर्यग्योनिसर्वहिंसका
 विरूपकं कुर्वन्ति मम मन्त्र-तन्त्र-यन्त्र-विष-चूर्ण-सर्व-प्रयोगा-
 दीनात्महस्तेन यः करोति करिष्यति कारयिष्यति तान् सर्वानन्येषां

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

471

निर्वर्तयित्वा पातय कारय मस्तके स्वाहा।

इति भैरवीतन्त्रे भैरवीसंवादे आचार्य-पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिसंस्कृतं विपरीत-
प्रत्यङ्गिरास्तोत्रं समाप्तम् । ॐ

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

महेश्वर उवाच-शृणु देवि! महाविद्यां सर्वसिद्धिप्रदायिकाम् ।

यस्य विज्ञानमात्रेण शत्रुवर्गा लयं गताः ॥१॥

‘ॐ ॐ ॐ-’ से ‘मस्तके स्वाहा’ तक यह प्रधान माला मन्त्र है।

इस प्रकार आचार्य-पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्र-शास्त्रिकृत-‘शिवदत्ती’-भाषाटीका

में विपरीत प्रत्यङ्गिरा-स्तोत्र समाप्त । ॐ

महेश्वर ने कहा-हे देवि! सम्पूर्ण सिद्धियों को देने वाली महाविद्या के
स्तोत्र को सुनो, जिसके जानने मात्र से ही शत्रुओं का विनाश हो जाता है॥१॥

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

विपरीतमहाकाली

सर्वभूतभयङ्करी ।

यस्याः प्रसङ्गमात्रेण कम्पते च जगत्त्रयम् ॥२॥

न च शान्तिप्रदः कोऽपि परमेशो न चैव हि ।

देवताः प्रलयं यान्ति किं पुनर्मानवादयः ॥३॥

पठनाद् धारणाद् देवि! सृष्टिसंहारको भवेत् ।

अभिचारादिकाः सर्वा या या साध्यतमाः क्रियाः ।

स्मरणेन महाकाल्या नाशं जग्मुः सुरेश्वरि ॥४॥

विपरीत महाकाली सम्पूर्ण प्राणियों को भय उत्पन्न करने वाली है। इसके स्मरण मात्र से ही तीनों लोक काँपने लगते हैं॥२॥ परमेश्वर आदि कोई भी देवता उसे शान्त नहीं कर सकते। उसके सामने देवता भी विनष्ट हो जाते हैं फिर मनुष्यों की बात ही क्या?॥३॥ मनुष्य महाविद्या-महाकाली के स्तोत्र को पढ़ने से सृष्टि के संहार करने में समर्थ हो जाता है। अभिचारादि (मारण,

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

सिद्धिविद्या महाकाली यत्रेवेह च मोदते ।
 सप्तलक्षमहाविद्या गोपिता परमेश्वरि! ॥५॥
 महाकाली महादेवि! शङ्करश्रेष्ठदेवताः ।
 यस्याः प्रसादमात्रेण परब्रह्म महेश्वरः ॥६॥
 कृत्तिमादि-विषघ्नीशा प्रलयादि निवर्तिका ॥७॥

मोहन, उच्चाटन आदि) सारी क्रियाएँ इस स्तोत्र के स्मरण मात्र से नष्ट हो जाती हैं॥४॥

सिद्धिविद्या महाकाली जिस स्थान पर आनन्दपूर्वक विहार करती हैं, वहाँ सात लाख महाविद्या उनकी रक्षा करती हैं॥५॥ हे महाकालि; हे महादेवि, तुम शंकर की श्रेष्ठ देवता हो, तुम्हारी प्रसन्नता मात्र से ही सदाशिव परब्रह्म हो गये॥६॥ यह महाकाली कृत्तिमादि विषों का विनाश करने में समर्थ हैं तथा प्रलयादि को भी रोकने में समर्थ हैं॥७॥

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

त्वदङ्घ्रिदर्शनादेव कम्पमानो महेश्वरः ।
 यस्य निग्रहमात्रेण पृथिवी प्रलयं गता ॥८॥
 दशविद्या यदा ज्ञाता दशद्वारसमाश्रिता ।
 प्राचीद्वारे भुवनेशी दक्षिणे कालिका तथा ॥९॥
 नाक्षत्री पश्चिमे च उत्तरे भैरवी तथा ।
 ऐशान्शं सततं देवि! प्रचण्डचण्डिका तथा ॥१०॥

भगवान् महेश्वर तो तुम्हारे चरण के दर्शन मात्र से ही काँपने लगते हैं, जिसके क्रोध करने मात्र से ही पृथिवी प्रलय को प्राप्त होने लगती है॥८॥ देवियाँ इस महाकाली के दश द्वार पर रहने वाली दशविद्या के नाम से प्रख्यात हैं। पूर्व द्वार पर भुवनेशी, दक्षिण द्वार पर कालिका नाम की देवी रहती है॥९॥ पश्चिम द्वार पर नाक्षत्री, उत्तर द्वार पर भैरवी, ईशान कोण में प्रचण्ड चण्डिका का नाम विख्यात है॥१०॥

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

आग्नेय्यां बगलादेवी रक्षःकोणे मतङ्गिनी ।
 धूमावती च वायव्ये अध ऊर्ध्वे च सुन्दरी ॥११॥
 सम्मुखे षोडशी देवी जाग्रत्-स्वप्न-स्वरूपिणी ।
 वामभागे च देवेशी महात्रिपुरसुन्दरी ॥१२॥
 अंशरूपेण देवेशी सर्वा देव्यः प्रतिष्ठिताः ।
 महाप्रत्यङ्गिरा चैव प्रत्यङ्गिरा तथोदिता ॥१३॥

इस महाकाली के आग्नेय कोण में बगला देवी, नैऋत्य कोण में मतङ्गिनी, वायव्य में धूमावती, ऊपर तथा नीचे सुन्दरी नामक देवियाँ रहती हैं॥११॥ जाग्रत्, स्वप्न तथा सुषुप्ति स्वरूप वाली षोडशी देवी, सम्मुख में तथा वाम भाग में त्रिपुर-सुन्दरी का निवास है॥१२॥ महाकाली के अंशरूप से ये विद्याएँ प्रतिष्ठित (पूजित) हैं। यह महाकाली अङ्गिरा तथा प्रत्यङ्गिरा नाम से विख्यात हैं॥१३॥

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

महाविष्णुर्यदा ज्ञाता भुवनानां महेश्वरि ।
 कर्ता पाता च संहर्ता सत्यं सत्यं वदामि ते ॥१४॥
 भुक्ति-मुक्तिप्रदा देवि! महाकाली सुनिश्चितम् ।
 वेदशास्त्र-प्रगुप्ता सा नन्दस्या दैवतैरपि ॥१५॥
 अनन्तकोटिसूर्याभा सर्वजन्तुभयङ्करी ।
 ध्यानज्ञानविहीना सा वेदान्तामृतवर्षिणी ॥१६॥

यह भगवती महाविष्णु रूप से लोकों का सृजन, पालन तथा संहार करती हैं। मैं यह सत्य-सत्य कहता हूँ॥१४॥ यह महाकाली भोग तथा मुक्ति को देने वाली हैं। वेदशास्त्रों की रक्षा करने वाली हैं तथा देवताओं को आनन्द देने वाली हैं॥१५॥ अनन्त कोटि सूर्यों के समान तेजस्वी हैं, सारे प्राणियों को भय उत्पन्न करने वाली हैं, ध्यान तथा ज्ञान के बिना ही वेदान्तामृत की वर्षा करने वाली हैं॥१६॥

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

सर्वमन्त्रमयी काली निगमाऽऽगमकारिणी ।
 निगमाऽऽगमकारी सा महाप्रलयकारिणी ॥१७॥
 यस्याऽङ्गधर्मलवा च सा गङ्गा परमोदिता ।
 महाकाली नगेऽनुस्था विपरीता महोदया ॥१८॥
 विपरीता प्रत्यङ्गिरा तत्र काली प्रतिष्ठिता ।
 साधकस्मरणमात्रेण शत्रूणां निगमागमाः ॥१९॥

यह महाकाली सभी मन्त्रों का स्वरूप हैं तथा निगम (वेद), आगम (मन्त्र शास्त्र) की रचयिता हैं तथा महाप्रलय करने वाली हैं ॥१७॥ जिसके अंग के स्वेद (पसीना) स्वरूप मात्र से गङ्गा प्रवाहित हैं तथा जो पर्वतराज पर विद्यमान पार्वती के रूप में विपरीत प्रत्यङ्गिरा काली कही जाती हैं। साधक के स्मरण मात्र से ही शत्रुओं के निगम, आगम नष्ट हो जाते हैं,

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

नाशं जग्मुः नशीं जग्मुः सत्यं सत्यं वदामि ते ।
 परब्रह्म महादेवी पूजनैरीश्वरो भवेत् ॥२०॥
 शिवकोटिसमो योगी विष्णुकोटिसमः स्थिरः ।
 सर्वैराराधिता सा वै भुक्ति-मुक्तिप्रदायिनी ॥२१॥
 गुरुमन्त्रशतं जप्त्वा श्वेतसर्षपमानयेत् ॥२२॥

मैं यह सत्य-सत्य कहता हूँ। महादेवी के पूजन से मनुष्य सर्व-समर्थ होकर परब्रह्म हो जाता है॥१८-२०॥

करोड़ों शिव के समान योगी तथा करोड़ों विष्णु के समान स्थिर हो जाता है। आराधना से प्रसन्न होकर वह भोग तथा मोक्ष को देने वाली हैं। गुरुमन्त्र का सौ बार जप कर श्वेत सर्षप (सफेद सरसों) ले आना चाहिए॥२१-२२॥

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

ॐ हुँ स्फारय स्फारय मारय मारय शत्रुवर्गान् नाशय
नाशय स्वाहा। इति विंशाक्षरी।

आत्मरक्षां शत्रुनाशं सा करोति च तत्क्षणात् ।

ऋषिन्यासादिकं कृत्वा सर्षपैर्मारणं चरेत् ॥२३॥

विनियोगः- ॐ अस्य श्रीमहाविपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रमन्त्रस्य
महाकालभैरवऋषिस्त्रिष्टुप्छन्दः, श्रीमहाविपरीतप्रत्यङ्गिरादेवता,

‘ॐ हुँ स्फारय-स्फारय मारय-मारय शत्रुवर्गान् नाशय-नाशय स्वाहा’
यह विंशाक्षरी मन्त्र है। इसके जप से भगवती महाकाली उसी क्षण साधक
की रक्षा तथा शत्रुओं का नाश करती हैं। यदि मारण करना हो, तो
ऋष्यादिन्यास कर सफेद सरसों का प्रयोग करना चाहिए॥२३॥

विनियोग- हाथ में जल लेकर, ‘ॐ अस्य श्रीमहाविपरीत-प्रत्यङ्गिरास्तोत्र-

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

हं बीजं, ह्रीं शक्तिः, क्लीं कीलकं, मम सर्वार्थसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः ।

मालामन्त्रः— ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ नमो
विपरीतप्रत्यङ्गिरायै सहस्रानेककार्यलोचनायै कोटिविद्युज्जिह्वायै
महाव्यापिन्यै संहाररूपायै जन्मशान्तिकारिण्यै मम सपरिवारकस्य
भावि-भूत-भवच्छत्रु-दारापत्यान् संहारय संहारय महाप्रभावं
दर्शय दर्शय हिलि हिलि किलि किलि मिलि मिलि चिलि

मन्त्रस्य' से आरम्भ कर 'जपे विनियोगः' तक मन्त्र पढ़ कर भूमि पर जल छोड़ दे।

'ॐ ॐ— नमो विपरीतप्रत्यङ्गिरायै' से लेकर 'हूँ फट् स्वाहा' तक प्रत्यङ्गिरा के माला मन्त्र हैं।

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

चिलि भूरि भूरि विद्युज्जिह्वे ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल ध्वंसय
 ध्वंसय प्रध्वंसय प्रध्वंसय ग्रासय ग्रासय पिब पिब नाशय
 नाशय त्रासय त्रासय वित्रासय वित्रासय मारय मारय विमारय
 विमारय भ्रामय भ्रामय विभ्रामय विभ्रामय द्रावय द्रावय विद्रावय
 विद्रावय हूँ हूँ फट् स्वाहा।

हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं
 क्लीं ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ विपरीतप्रत्यङ्गिरे हूँ लँ ह्रीं लँ क्लीं
 लँ ॐ लँ फट् फट् स्वाहा।

हूँ लँ ह्रीं क्लीं ॐ विपरीतप्रत्यङ्गिरे मम सपरिवारकस्य
 यावच्छत्रून् देवता-पितृ-पिशाच-नाग-गरुड-किन्नर-विद्याधर-
 गन्धर्व-यक्ष-राक्षस-लोकपालान् ग्रह-भूत-नर-लोकान् समन्त्रान्

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

सौषधान् सायुधान् स-सहायान् पाणौ छिन्धि छिन्धि भिन्धि
 भिन्धि निकृन्तय निकृन्तय छेदय छेदय उच्चाटय उच्चाटय
 मारय मारय तेषां साहङ्कारादिधर्मान् कीलय कीलय घातय
 घातय नाशय नाशय विपरीतप्रत्यङ्गिरे स्फ्रें स्फ्रेत्कारिणी ॐ
 ॐ जँ ॐ ॐ जँ ॐ ॐ जँ ॐ ॐ जँ ॐ ॐ जँ ॐ ठः
 ॐ ठः ॐ ठः ॐ ठः ॐ ठः मम सपरिवारकस्य शत्रूणां
 सर्वा विद्याः स्तम्भय स्तम्भय नाशय नाशय हस्तौ स्तम्भय
 स्तम्भय मुखं स्तम्भय स्तम्भय नाशय नाशय नेत्राणि स्तम्भय
 स्तम्भय नाशय नाशय दन्तान् स्तम्भय स्तम्भय नाशय नाशय
 जिह्वां स्तम्भय स्तम्भय नाशय नाशय पादौ स्तम्भय स्तम्भय
 नाशय नाशय गुह्यं स्तम्भय स्तम्भय नाशय नाशय सकुटुम्बानां

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

स्तम्भय स्तम्भय नाशय नाशय स्थानं स्तम्भय स्तम्भय नाशय
 नाशय सँ प्राणान् कीलय कीलय नाशय नाशय हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ
 हूँ हूँ हीं हीं हीं हीं हीं हीं हीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं
 क्लीं क्लीं ऐं ऐं ऐं ऐं ऐं ऐं ऐं ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ
 फट् फट् स्वाहा।

मम सपरिवारकस्य सर्वतो रक्षां कुरु कुरु फट् फट्
 स्वाहा (हीं हीं हीं हीं हीं) ऐं हूँ हीं क्लीं हूँ सों विपरीतप्रत्यङ्गिरे!
 मम सपरिवारकस्य भूत-भविष्य-च्छत्रूणामुच्चाटनं कुरु कुरु
 हूँ हूँ फट् स्वाहा।

हीं हीं हीं हीं हीं वँ वँ वँ वँ वँ लँ लँ लँ लँ लँ रँ रँ रँ
 रँ रँ यँ यँ यँ यँ यँ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ नमो भगवति

विपरीतप्रत्यङ्गिरे दुष्ट-चाण्डालिनी-त्रिशूल-वज्राङ्कुश-शक्ति-
 शूल-धनुः-शर-पाशधारिणी शत्रुरुधिर-चर्ममेदो-मांसाऽस्थि-
 मज्जा-शुक्र-मेहन-वसा-वाक्-प्राण-मस्तक-हेत्वादिभक्षिणी
 परब्रह्मशिवे ज्वालादायिनी-मालिनी शत्रूच्चाटन-मारण-क्षोभन-
 स्तम्भन-मोहन-द्रावण-जृम्भण-भ्रामण-रौद्रण-सन्तापन-यन्त्र-
 मन्त्र-तन्त्रान्तर्यागि-पुरश्चरण-भूतशुद्धि-पूजाफल-परमनिर्वाण-
 हारणकारिणि कपालखट्वाङ्ग-परशुधारिणी मम सपरिवारकस्य
 भूतभविष्यच्छत्रून् स-सहायान् सवाहनान् हन हन रण रण
 दह दह दम दम धम धम पच पच मथ मथ लङ्घय लङ्घय
 खादय खादय चर्वय चर्वय व्यथय व्यथय ज्वरय ज्वरय मूकान्
 कुरु कुरु ज्ञानं हर हर हूँ हूँ फट् फट् स्वाहा।

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

हीं हीं हीं हीं हीं हीं हीं हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं
क्लीं क्लीं क्लीं ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ विपरीतप्रत्यङ्गिरे हीं
हीं हीं हीं हीं हीं हीं हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं
क्लीं क्लीं ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ फट् स्वाहा।

मम सपरिवारकस्य कृतमन्त्र-यन्त्र-तन्त्र-हवन-कृतौषध-
विषचूर्ण-शास्त्राद्यभिचार-सर्वोपद्रवादिकं येन कृतं कारितं कुरुते
करिष्यति वा तान् सर्वान् हन हन स्फारय स्फारय सर्वतो रक्षां
कुरु कुरु हूँ हूँ फट् फट् स्वाहा।

हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ हीं हीं हीं हीं हीं हीं क्लीं क्लीं क्लीं
क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ फट् फट्
स्वाहा। ॐ हूँ हीं क्लीं ॐ अं विपरीत प्रत्यङ्गिरे मम सपरिवारकस्य

शत्रवः कुर्वन्ति करिष्यन्ति शत्रुश्च कारयामास कारयन्ति कारयि-
 ष्यन्ति याऽन्यां कृत्यान्तैः सार्धं तांस्तां विपरीतां कुरु कुरु नाशय
 नाशय मारय मारय श्मशानस्थानं कुरु कुरु कृत्यादिकां क्रियां
 भावि-भूत-भवच्छत्रूणां यावत्कृत्यादिकां क्रियां विपरीतां कुरु
 कुरु तान् डाकिनीमुखे हारय हारय भीषय भीषय त्रासय त्रासय
 परमशमनरूपेण हन हन धर्मावच्छिन्न-निर्वाणं हर हर तेषाम्
 इष्टदेवानां शासय शासय क्षोभय क्षोभय प्राणादि-मनोबुद्ध्यहङ्कार-
 क्षुत्तृष्णाकर्षण-लयन-आवागमन-मरणादिकं नाशय नाशय हूँ
 हूँ ह्रीं ह्रीं क्लीं क्लीं ॐ ॐ फट् फट् स्वाहा।

क्षौं लँ हँ सँ षँ शँ वँ लँ रँ यँ मँ भँ बँ फँ पँ नँ धँ दँ थँ
 तँ णँ ढँ डँ ठँ टँ जँ झँ जँ छँ चँ ङँ घँ गँ खँ कँ अः अँ औं
 ओं ऐं एँ लृँ लृँ ऋँ ऋँ ऊँ उँ ईँ इंँ आँ अँ हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

हीं हीं हीं हीं हीं हीं हीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं
 क्लीं ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ विपरीतप्रत्यङ्गिरे हूँ हूँ हूँ
 हूँ हूँ हूँ हूँ हीं हीं हीं हीं हीं हीं हीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं
 क्लीं क्लीं क्लीं ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ फट् स्वाहा।

क्षं लं हं सं षं शं वं लं रं यं मं भं बं फं पं नं धं दं थं
 तं णं ढं डं ठं टं जं झं जं छं चं डं घं गं खं कं अः अं औं
 ओं ऐं एं लृं लृं ऋं ऋं ऊं उं ईं इं आं अं हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ
 हीं हीं हीं हीं हीं हीं हीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं
 क्लीं ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ फट् फट् स्वाहा।

अः अं औं ओं ऐं एं लृं लृं ऋं ऋं ऊं उं ईं इं आं अं डं
 घं गं खं कं जं झं जं छं चं णं ढं डं ठं टं नं धं दं थं तं मं भं
 बं फं पं क्षं लं हं सं षं शं वं लं रं यं ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

ॐ सपरिवारकस्य स्थाने शत्रूणां कृत्यान् सर्वान् विपरीतान्
 कुरु कुरु तेषां तन्त्र-मन्त्र-तन्त्रार्चन-श्मशानारोहण-भूमिस्थापन-
 भस्मप्रक्षेपण-पुरश्चरण-होमाभिषेकादिकान् कृत्यान् दूरी कुरु
 कुरु हूँ विपरीतप्रत्यङ्गिरे मां सपरिवारकं सर्वतः सर्वेभ्यो रक्ष
 रक्ष हूँ ह्रीं फट् स्वाहा।

अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं लृं एं ऐं ओं औं अं अः कं खं
 गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं
 यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं ॐ
 क्लीं ह्रीं श्रीं ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं ॐ हूँ ह्रीं क्लीं
 ॐ विपरीतप्रत्यङ्गिरे हूँ ह्रीं क्लीं ॐ फट् स्वाहा।

ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं ॐ

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

क्लीं ह्रीं श्रीं ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं अं आं ईं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं लृं
 एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं
 ढं णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं यं रं लं वं शं षं सं हं लं
 क्षं विपरीतप्रत्यङ्गिरे मम सपरिवारकस्य शत्रूणां विपरीतक्रियां
 नाशय नाशय त्रुटिं कुरु कुरु तेषामिष्टदेवतादि विनाशं कुरु
 कुरु सिद्धिम् अपनय-अपनय विपरीतप्रत्यङ्गिरे शत्रुमर्दिनि भयङ्करि
 नानाकृत्यामर्दिनि ज्वालिनि महाघोरतरे त्रिभुवनभयङ्करि शत्रूणां
 मम सपरिवारकस्य चक्षुः-श्रोत्राणि पादौ सर्वतः सर्वेभ्यः
 सर्वदा रक्षां कुरु कुरु स्वाहा।

श्रीं ह्रीं ऐं ॐ वसुन्धरे मम सपरिवारकस्य स्थानं रक्ष
 रक्ष हूँ फट् स्वाहा। श्रीं ह्रीं ऐं ॐ महालक्ष्मि मम सपरिवारकस्य

पादौ रक्ष रक्ष फट् स्वाहा। श्रीं ह्रीं ऐं ॐ चण्डिके मम
 सपरिवारकस्य जङ्घे रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा। श्रीं ह्रीं ऐं ॐ
 चामुण्डे मम सपरिवारकस्य गुह्यं रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा। श्रीं
 ह्रीं ऐं ॐ इन्द्राणि मम सपरिवारकस्य नाभिं रक्ष रक्ष हूँ फट्
 स्वाहा। श्रीं ह्रीं ऐं ॐ नारसिंहि मम सपरिवारकस्य बाहूँ रक्ष
 रक्ष हूँ फट् स्वाहा। श्रीं ह्रीं ऐं ॐ वाराहि मम सपरिवारकस्य
 हृदयं रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा। श्रीं ह्रीं ऐं ॐ वैष्णवि मम
 सपरिवारकस्य कण्ठं रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा। श्रीं ह्रीं ऐं ॐ
 कौमारि मम सपरिवारकस्य वक्त्रं रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा।
 श्रीं ह्रीं ऐं ॐ माहेश्वरि मम सपरिवारकस्य नेत्रे रक्ष रक्ष हूँ

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

फट् स्वाहा। श्रीं ह्रीं ऐं ॐ ब्रह्माणि मम सपरिवारकस्य शिरो
रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा। हूँ ह्रीं क्लीं ॐ विपरीतप्रत्यङ्गिरे मम
सपरिवारकस्य छिद्रं सर्वगात्राणि रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा।

सन्तापिनी संहारिणी रौद्री च भ्रामिणी तथा ।

जृम्भिणी द्राविणी चैव क्षोभिणी मोहिनी ततः ॥२४॥

स्तम्भिनी चांशरूपास्ताः शत्रुपक्षे नियोजिताः ।

प्रेरिताः साधकेन्द्रेण दुष्टशत्रुप्रमर्दिकाः ॥२५॥

१. सन्तापिनी, २. संहारिणी, ३. रौद्री, ४. भ्रामिणी, ५. जृम्भिणी,
६. द्राविणी, ७. क्षोभिणी, ८. मोहिनी, ९. स्तम्भिनी— ये नव महाविद्याएँ
साधक की प्रेरणा से शत्रुपक्ष में अंश रूप से नियोजित होने पर समस्त
दुष्ट शत्रुओं का संहार करती हैं ॥२४-२५॥

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

१. ॐ सन्तापिनि स्फ्रें स्फ्रें मम सपरिवारकस्य शत्रून्
 रौद्रय रौद्रय हूँ फट् स्वाहा। २. ॐ संहारिणि स्फ्रें स्फ्रें मम
 सपरिवारकस्य शत्रून् संहारय संहारय हूँ फट् स्वाहा। ३.
 ॐ रौद्री स्फ्रें स्फ्रें मम सपरिवारकस्य शत्रून् रौद्रय रौद्रय हूँ
 फट् स्वाहा। ४. ॐ भ्रामिणि स्फ्रें स्फ्रें मम सपरिवारकस्य
 शत्रून् भ्रामय भ्रामय हूँ फट् स्वाहा। ५. ॐ जृम्भिणि स्फ्रें
 स्फ्रें मम सपरिवारकस्य शत्रून् जृम्भय जृम्भय हूँ फट् स्वाहा।
 ६. ॐ द्राविणि स्फ्रें स्फ्रें मम सपरिवारकस्य शत्रून् द्रावय
 द्रावय हूँ फट् स्वाहा। ७. ॐ क्षोभिणि स्फ्रें स्फ्रें मम सपरिवार-
 कस्य शत्रून् क्षोभय क्षोभय हूँ फट् स्वाहा। ८. ॐ मोहिनि

‘ॐ सन्तापिनि०’ से लेकर ‘स्तम्भय हूँ फट् स्वाहा’ पर्यन्त नव
 महाविद्याओं के मन्त्र हैं।

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

स्फ्रेँ स्फ्रेँ मम सपरिवारकस्य शत्रून् मोहय मोहय हूँ फट्
स्वाहा। ९. ॐ स्तम्भिनि स्फ्रेँ स्फ्रेँ मम सपरिवारकस्य शत्रून्
स्तम्भय स्तम्भय हूँ फट् स्वाहा।

फलश्रुति:-

वृणोति य इमां विद्यां शृणोति च सदाऽपि ताम् ।
यावत्कृत्यादि शत्रूणां तत्क्षणादेव नश्यति ॥ १ ॥
मारणं शत्रुवर्गाणां रक्षणाय चात्मपरम् ।
आयुर्वद्धि - र्यशोवृद्धिस्तेजोवृद्धिस्तथैव च ॥ २ ॥

फलश्रुति—जो लोग इस महाविद्या को सदैव वरण तथा श्रवण करते हैं,
उसी समय से उनके शत्रुओं के समस्त प्रयत्न निष्फल हो जाते हैं॥१॥ यह
स्तोत्र या मन्त्र शत्रुवर्गों को मारने वाला है तथा साधक की रक्षा करता है। उस
पुरुष की आयु की वृद्धि, यश की वृद्धि तथा तेज की वृद्धि होती है॥२॥

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

कुबेर इव वित्ताढ्यः सर्वसौख्यमवाप्नुयात् ।
 वाय्वादीनामुपशमं विषमज्वरनाशनम् ॥ ३ ॥
 परवित्तहरा सा वै परप्राणहरा तथा ।
 परक्षोभादिककरा तथा सम्पत्करा शुभा ॥ ४ ॥
 स्मृतिमात्रेण देवेशि! शत्रुवर्गा लयं गताः ।
 इदं सत्यमिदं सत्यं दुर्लभा दैवतैरपि ॥ ५ ॥

इस मन्त्र तथा स्तोत्र का जप करने वाला कुबेर के समान धनवान् होकर सारे सुखों का उपभोग करता है। इस मन्त्र के जप से वायुरोग तथा विषम ज्वर का नाश हो जाता है॥३॥ यह स्तोत्र शत्रुओं के धन तथा प्राण का अपहरण करने वाला है, तथा शत्रुवर्ग के अन्तःकरण में क्षोभ (क्लेश) पैदा कर साधक को सम्पत्ति प्रदान करता है॥४॥ हे देवेशि! इस स्तोत्र के स्मरण मात्र से ही शत्रुवर्ग नष्ट हो

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

शठाय परशिष्याय न प्रकाश्या कदाचन ।

पुत्राय भक्तियुक्ताय स्वशिष्याय तपस्विने ।

प्रदातव्या महाविद्या चात्मवर्गप्रदा यतः ॥६॥

विना ध्यानैर्विना जापैर्विना पूजा विधानतः ।

विना षोढा विना ज्ञानैर्मोक्षसिद्धिः प्रजायते ॥७॥

जाते हैं- यह सत्य है, यह सत्य है। यह स्तोत्र देवताओं को भी दुर्लभ है॥५॥

शठ (मूर्ख) तथा दूसरे से दीक्षा लेने वाले शिष्य को यह विद्या नहीं देनी चाहिए। यह विद्या केवल अपने पुत्र तथा भक्ति से युक्त अपने शिष्य और तपस्वी को ही देनी चाहिए, क्योंकि इस विद्या को आत्मवर्ग में ही देने का विधान है॥६॥ यह विद्या ध्यान, जप, पूजा, सेवा तथा ज्ञान के बिना ही मोक्ष सिद्धि को देने वाली है॥७॥

परनारीहरा विद्या पररूपहरा तथा ।
 वायुचन्द्रस्तम्भकरा मैथुनानन्दसंयुता ॥८॥
 त्रिसन्ध्यमेकसन्ध्यं वा यः पठेत् भक्तितः सदा ।
 सत्यं वदामि देवेशि मम कोटिसमो भवेत् ॥९॥
 क्रोधादेव गणाः सर्वे लयं यास्यन्ति निश्चितम् ।
 किं पुनर्मानवा देवि! भूतप्रेतादयो मृताः ॥१०॥

यह विद्या शत्रुवर्ग के नारी तथा रूप का अपहरण करने वाली है तथा वायु, सूर्य एवं चन्द्रमा की गति को स्तम्भित करने वाली है और मैथुन के समान आनन्द देने वाली है ॥८॥ जो लोग तीनों सन्ध्या में अथवा एक सन्ध्या में भक्तिपूर्वक इस स्तोत्र का पाठ करते हैं, हे देवेशि, मैं सत्य कहता हूँ कि, वे लोग मुझसे करोड़ों गुना अधिक हैं ॥९॥ उस मनुष्य के क्रोध मात्र से मेरे गण नष्ट हो जाते हैं फिर मनुष्यों की बात ही क्या? और भूत-प्रेतादि तो मरे हुए ही हैं ॥१०॥

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

विपरीता समा विद्या न भूता न भविष्यति ।
 पठनान्ते परब्रह्म विद्या सभास्करा तथा ।
 मातृकां पुटितं देवि! दशधा प्रजपेत् सुधीः ॥११॥
 वेदादिपुटिका देवि! मातृकानन्तरूपिणि! ।
 तथा हि पुटितां विद्यां प्रजपेत् साधकोत्तमः ॥१२॥

इस विपरीत प्रत्यङ्गिरा महाविद्या के समान आज तक न तो कोई विद्या
 हुई है और न होगी। सूर्य के समान तेजस्विनी इस महाविद्या के पाठ मात्र से
 ही मनुष्य परब्रह्म के समान समर्थ हो जाता है॥११॥ भगवान् शङ्कर पार्वती
 से कहते हैं कि, हे देवि! मातृका से सम्पुट कर इस महाविद्या का साधक को दस
 बार पाठ करना चाहिए। हे अनन्तरूपिणी मातृके! तुम वेदादि से सम्पुटित हो।
 इस प्रकार साधक को सम्पुटित कर प्रत्यङ्गिरा स्तोत्र का पाठ करना चाहिए॥१२॥

मातृका विद्या इस स्तोत्र में निम्न प्रकार निर्दिष्ट है।

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ अँ आँ ईं इँ उँ ऊँ ऋँ ॠँ
लृँ लृँ एँ ऐँ ओँ औँ अँ अः कँ खँ गँ घँ ङँ चँ छँ जँ झँ ञँ
टँ ठँ डँ ढँ णँ तँ थँ दँ धँ नँ पँ फँ बँ भँ मँ यँ रँ लँ वँ शँ षँ
सँ हँ लँ क्षँ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ विपरीतपरब्रह्ममहाप्रत्यङ्गिरे
ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ अँ आँ ईं इँ उँ ऊँ ऋँ ॠँ लृँ लृँ
एँ ऐँ ओँ औँ अँ अः कँ खँ गँ घँ ङँ चँ छँ जँ झँ ञँ टँ ठँ डँ
ढँ णँ तँ थँ दँ धँ नँ पँ फँ बँ भँ मँ यँ रँ लँ वँ शँ षँ सँ हँ लँ
क्षँ मम सपरिवारकस्य सर्वेभ्यः सर्वतः सर्वदा रक्षां कुरु कुरु
मरण-भयापन-पापनय-त्रिजगतां पररूपवित्तायुर्मे सपरिवारकाय
देहि देहि दापय साधकत्वं प्रभुत्वं च सततं देहि देहि विश्वरूपे
धनं पुत्रान् देहि देहि मां सपरिवारकस्य मां पश्येत्तु देहिनः
सर्वे हिंसकाः प्रलयं यास्तु मम सपरिवारकस्य शत्रूणां

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

बलबुद्धिहानिं कुरु कुरु तान् स-सहायान् स्वेष्टदेवतान् संहारय
संहारय स्वाचारमपनयाऽपनय ब्रह्मास्त्रादीनि व्यर्थीकुरु हूँ हूँ
स्फ्रेँ स्फ्रेँ ठः ठः फट् फट् ॐ ।

मनोजित्वा जपेल्लोकं भोगं रोगं तथा यजेत् ।

दीनतां हीनतां जित्वा कामिनीं निर्वाणपद्धतिम् ॥१३॥

इति देवरिया-मण्डलान्तर्गत 'मझौली राज्य' (सम्प्रति वाराणसी) वास्तव्येन पण्डित श्रीसन्त-
शरणमिश्रात्मज-पण्डितश्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिणा सङ्गृहीतं श्रीविपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रं समाप्तम् ।

साधक अपने मन को वश में कर तथा दीनता एवं हीनता का
परित्याग कर भोग, रोग, कामिनी तथा मोक्ष को भगवती के निमित्त अर्पण
कर इस स्तोत्र का पाठ तथा जप करे ॥१३॥

इस प्रकार आचार्य-पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रि-विरचित 'शिवदत्ती'

भाषाटीका में विपरीत-प्रत्यङ्गिरास्तोत्र समाप्त ।

कालीकर्पूरस्तोत्रम्

कर्पूरं मध्यमान्त्य - स्वरपर-रहितं सेन्दुवामाक्षियुक्तं
 बीजं ते मातरेतत् त्रिपुरहरवधुं त्रिष्कृतं ये जपन्ति ।
 तेषां गद्यानि पद्यानि च मुखकुहरादुल्लसन्तोऽववाचः
 स्वच्छन्द-ध्वान्तधाराधर-रुचिरुचिरे सर्वसिद्धिं गतानाम् ॥ १ ॥
 ईशानः सेन्दुवाम - श्रवण-परिगतं बीजमन्यन्महेशि
 द्वन्द्वं ते मन्दचेता यदि जपति जनो वारमेकं कदाचित् ।
 जित्वा वाचामधीशं धनदमपि चिरं मोहयत्यम्बुजाक्षी-
 वृन्दं चन्द्रार्द्धचूडे प्रभवति स महाघोररावावतंसे^१ ॥ २ ॥
 ईशो वैश्वानरस्थः शशधर - विलसदामनेत्रेण युक्तं
 बीजं ते द्वन्द्वमन्यद्-विगलित-चिकुरे कालिके ये जपन्ति ।

१. 'घोरशावावतंसे' इत्यपि पाठः।

कालीकूर्पूरस्तोत्रम्

द्वेष्टारं ते निहन्ति त्रिभुवनमसिते वश्यभावं नयन्ति
 सूक्क-द्वन्द्वास्त्रधारा - द्वयधरवदने दक्षिणे कालिकेति ॥ ३ ॥
 ऊर्ध्वं वामे कृपाणं करतलकमले छिन्नमुण्डं तथाऽधः
 सव्ये भीतं वरं च त्रिजगदघहरे दक्षिणे कालिके च ।
 जप्तवैतन्नामवर्णं तव मनुविभवं भावयन्तस्तदर्शं
 तेषामष्टौ करस्थाः प्रकटितवदने सिद्धयस्त्र्यम्बकस्य ॥ ४ ॥
 वर्गाद्यं वह्निसंस्थं विधुरति-ललितं तत्रयं कूर्चयुग्मं
 लज्जाद्वन्द्वं च पश्चात् स्मितमुखि तदधष्ठ-द्वयं योजयित्वा ।
 मातर्ये ये जपन्ति स्मरहरमहिले भावयं ते स्वरूपं
 ते लक्ष्मीलास्यलीला-कमलदृशः कामरूपा भवन्ति ॥ ५ ॥
 प्रत्येकं वा द्वयं वा त्रयमपि च परं बीजमत्यन्तगुह्यं
 त्वन्नाम्ना योजयित्वा सकलमपि सदा भाववन्तो जपन्ति ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

तेषां नेत्रारविन्दे विहरति कमला वक्त्रशुभ्रांशुबिम्बे
 वाग्देवी दिव्यमुण्ड-स्नगतिशय-लसत्कण्ठपीनस्तनाढ्ये ॥६॥
 गतासूनां बाहु - प्रकरकृतकाञ्ची - परिलसन्
 नितम्बां दिग्वस्त्रां त्रिभुवनविधात्रीं त्रिनयनाम् ।
 श्मशानस्थे तल्पे शवहृदि महाकालसुरत-
 प्रसक्तां त्वां ध्यायन् जननि जडचेता अपि कविः ॥७॥
 शिवाभिर्घोरैराभिः शव-निवह-मुण्डास्थि - निकरैः
 परं सङ्कीर्णायां प्रकटितचितायां हरवधूम् ।
 प्रविष्टां सन्तुष्टामुपरि सुरते नाऽतियुवतीं
 सदा त्वां ध्यायन्ति क्वचिदपि न तेषां परिभवः ॥८॥
 वदामस्ते किं वा जननि वयमुच्चैर्जडधियो
 न धाता नापीशो हरिरपि न ते वेत्ति परमम् ।

कालीकपूरस्तोत्रम्

तथाऽपि त्वद्भक्तिर्मुखरयति चाऽस्माकमसिते
 तदेतत् क्षन्तव्यो न खलु पशुरोषः समुचितः ॥ ९ ॥
 समन्तादापीन - स्तन - जघनधृग् - यौवनवती-
 रतासक्तो नक्तं यदि जपति भक्तस्तव मनुम् ।
 विवासास्त्वां ध्यायन् गलितचिकुरस्तस्य वशगाः
 समस्ताः सिद्धौघा भुवि चिरतरं जीवति कविः ॥ १० ॥
 समः स्वस्थीभूतो जपति विपरीतोऽपि स सदा
 विचिन्त्य त्वां ध्यायन्नतिशय - महाकालसुरताम् ।
 तदा तस्य क्षोणीतलविहरमाणस्य विदुषः
 कराम्भोजे वश्याः स्मरहरवधू सिद्धिनिवहाः ॥ ११ ॥

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

प्रसूते संसारं जननि जगतीं पालयति वा
 समस्तं क्षित्यादि प्रलयसमये संहरति च ।
 अतस्त्वं धाताऽपि त्रिभुवनपतिः श्रीपतिरपि
 महेशोऽपि प्रायः सकलमपि किं स्तौमि भवतीम् ॥ १२ ॥
 अनेके सेवन्ते भवदधिक - गीर्वाणनिवहा
 विमूढास्ते मातः! किमपि न हि जानन्ति परमम् ।
 समाराध्यामाद्यां हरि - हर - विरञ्ज्यादि - विबुधैः
 प्रपन्नोऽस्मि स्वैरं रतिरसमहानन्दनिरताम् ॥ १३ ॥
 धरित्री कीलालं शुचिरपि समीरोऽपि गगनं
 त्वमेका कल्याणी गिरिशरमणी कालि सकलम् ।
 स्तुतिः का ते मातर्निजकरुणया मामगतिकं
 प्रसन्ना त्वं भूया भवमनु न भूयान्मम जनुः ॥ १४ ॥

कालीकूर्पूरस्तोत्रम्

श्मशानस्थः स्वस्थो गलितचिकुरो दिक्पटधरः
 सहस्रं त्वर्काणां निजगलित-वीर्येण कुसुमम् ।
 जपंस्त्वत्प्रत्येकं मनुमपि तव ध्याननिरतो
 महाकालि स्वैरं स भवति धरित्रीपरिवृढः ॥ १५ ॥
 गृहे सम्मार्जन्या परिगलितवीर्यं हि कुसुमं
 समूलं मध्याह्ने वितरति चितायां कुजदिने ।
 समुच्चार्य प्रेम्णा मनुमपि सकृत्कालि सततं
 गजारूढो याति क्षितिपरिवृढः सत्कविवरः ॥ १६ ॥
 स्वपुष्पैराकीर्णं कुसुमधनुषो मन्दिरमहो
 पुरो ध्यायन् ध्यायन् जपति यदि भक्तस्तव मनुम् ।
 स गन्धर्वश्रेणीपतिरपि कवित्वामृतनदी-

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

नदीनः पर्यन्ते परमपदलीनः प्रभवति ॥ १७ ॥
 त्रिपञ्चारे पीठे शवशिवहृदि स्मेरवदनां
 महाकालेनोच्चैर्मदनरस - लावण्य - निरताम् ।
 समासक्तो नक्तं स्वयमपि रतानन्दनिरतो
 जनो यो ध्यायेत्त्वामपि जननि स स्यात् स्मरहरः ॥ १८ ॥
 सलोमास्थि स्वैरं पललमपि मार्जारमसिते
 परं चोष्टुं मेषं नर-महिषयोश्छागमपि वा ।
 बलिं ते पूजायामपि वितरतां मर्त्यमसतां
 सतां सिद्धिः सर्वा प्रतिपदमपूर्वा प्रभवति ॥ १९ ॥
 वशी लक्षं मन्त्रं प्रजपति हविष्याशनरतो
 दिवा मातर्युष्मच्चरण - युगलध्यान - निरतः ।

कालीकपूरस्तोत्रम्

परं नक्तं नग्नो निधुवनविनोदेन च मनं
 जनो लक्षं सम्यक् स्मरहरसमानः क्षितितले ॥२०॥
 इदं स्तोत्रं मातस्तव मनुसमुद्धारणजप-
 स्वरूपाख्यं पादाम्बुज - युगलपूजाविधियुतम् ।
 निशाब्दे वा पूजासमयमथवा यस्तु पठति
 प्रलापस्तस्याऽपि प्रसरति कवित्वामृतरसः ॥२१॥
 कुरङ्गाक्षीवृन्दं तमनुसरति प्रेमतरलं
 वशस्तस्य क्षोणीपतिरपि कुबेरप्रतिनिधिः ।
 रिपुः कारागारं कलयति च तत्केलिकलया
 चिरं जीवन्मुक्तः स भवति सुभक्तः प्रतिजनुः ॥२२॥

इति श्रीमहाकालप्रणीतं कालीकपूरस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

कालिकाष्टकम्

ध्यानम्

गलद्-रक्तमुण्डावली-कण्ठमाला महाघोररावा सुदंष्ट्रा कराला ।
 विवस्त्रा श्मशानालया मुक्तकेशी महाकाल-कामाकुला-कालिकेयम् ॥ १ ॥
 भुजे वामयुग्मे शिरोऽसी दधाना वरं दक्षयुग्मेऽभयं वै तथैव ।
 सुमध्याऽपि तुङ्गस्तनाभारनम्रा लसद्रक्तसृक्कद्वया सुस्मितास्या ॥ २ ॥
 शवद्वन्द्वकर्णावितंसा सुकेशी लसत्प्रेतपाणि-प्रयुक्तैक-काञ्ची ।
 शवाकार-मञ्चाधिरूढा शिवाभिश्चतुर्दिक्षु शब्दायमानाऽभिरेजे ॥ ३ ॥
 विरञ्ज्यादिदेवास्त्रयस्ते गुणांस्त्रीन् समाराध्य कालि! प्रधानाबभूवुः ।
 अनादिं सुरादिं मखादिं भवादिं स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥ ४ ॥
 जगन्मोहनीयं तु वाग्वादिनीयं सुहृत्पोषिणीं शत्रुसंहारणीयम् ।
 वचः स्तम्भनीयं किमुच्चाटनीयं स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥ ५ ॥

कालिकाष्टकम्

इयं स्वर्गदात्री पुनः कल्पवल्ली मनोजांस्तु कामान् यथार्थं प्रकुर्यात् ।
 कथा ते कृतार्था भवन्तीति नित्यं स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥६॥
 सुरापानमत्ते! सुभक्तानुरक्ते! लसत्पूतचित्ते! सदाविर्भवस्ते ।
 जप-ध्यान-पूजा-सुधाधौतपङ्काः स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥७॥
 चिदानन्दकन्दं हसन्मन्दमन्दं शरच्चन्द्रकोटि-प्रभापुञ्ज-बिम्बम् ।
 मुनीनां कवीनां हृदि द्योतमानं स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥८॥
 महामेघकाली सुरक्ताऽपि शुभ्रा कदाचिद् विचित्राकृतियोगमाया ।
 न बाला न वृद्धा न कामातुराऽपि स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥९॥
 क्षमस्वापराधं महागुप्तभावं मया लोकमध्ये प्रकाशीकृतं यत् ।
 तव ध्यानपूतेन चापल्यभावात् स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥१०॥

फलश्रुतिः—

यदि ध्यानयुक्तः पठेद् यो मनुष्यस्तदा सर्वलोके विशालो भवेच्च ।
 गृहे चाऽष्टसिद्धिमृते चापि मुक्तिः स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥११॥

इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं कालिकाष्टकं सम्पूर्णम् ।

देव्यपराध-क्षमापन-स्तोत्रम्

न मन्त्रं नो यन्त्रं तदपि च न जाने स्तुतिमहो
 न चाह्वानं ध्यानं तदपि च न जाने स्तुति-कथाः ।
 न जाने मुद्रास्ते तदपि च न जाने विलपनं
 परं जाने मातस्त्वदनुशरणं क्लेशहरणम् ॥ १ ॥
 विधेरज्ञानेन द्रविण - विरहेणा - ऽलसतया
 विधेयाऽशक्यत्वात् तव चरणयोर्या च्युतिरभूत् ।
 तदेतत् क्षन्तव्यं जननि सकलोद्धारिणि शिवे
 कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥ २ ॥
 पृथिव्यां पुत्रास्ते जननि बहवः सन्ति सरलाः
 परं तेषां मध्ये विरलतरलोऽहं तव सुतः ।

देव्यपराधक्षमापनस्तोत्रम्

मदीयोऽयं त्यागः समुचितमिदं नो तव शिवे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥३॥
जगन्मातर्मातस्तव चरण - सेवा न रचिता
न वा दत्तं देवि! द्रविणमपि भूयस्तव मया ।
तथाऽपि त्वं स्नेहं मयि निरुपमं यत् प्रकुरुषे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥४॥
परित्यक्ता देवा विविध-विधि - सेवाकुलतया
मया पञ्चाशीतेरधिकमपनीते तु वयसि ।
इदानीं चेन्मातस्तव यदि कृपा नाऽपि भविता
निरालम्बो लम्बोदर-जननि कं यामि शरणम् ॥५॥

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

श्वपाको जल्पाको भवति मधुपाकोपमगिरा
 निरातङ्को रङ्को विहरति चिरं कोटि-कनकैः ।
 तवापर्णे कर्णे विशति मनुवर्णे फलमिदं
 जनः को जानीते जननि जपनीयं जपविधौ ॥ ६ ॥
 चिताभस्मालेपो गरलमशनं दिक्पटधरो
 जटाधारी कण्ठे भुजगपतिहारी पशुपतिः ।
 कपाली - भूतेशो भजति जगदीशैकपदवीं
 भवानि त्वत्पाणि-ग्रहण-परिपाटी - फलमिदम् ॥ ७ ॥
 न मोक्षस्याऽऽकांक्षा भव-विभव-वाञ्छाऽपि च न मे
 न विज्ञानापेक्षा शशिमुखि सुखेच्छाऽपि न पुनः ।
 अतस्त्वां संयाचे जननि जननं यातु मम वै
 मृडानी रुद्राणी शिव शिव भवानीति जपतः ॥ ८ ॥

देव्यपराधक्षमापनस्तोत्रम्

नाऽऽराधिताऽसि विधिना विविधोपचारैः

किं रुक्ष-चिन्तन-परैर्न कृतं वचोभिः ।

श्यामे त्वमेव यदि किञ्चन मय्यनाथे

धत्से कृपामुचितमम्ब! परं तवैव ॥९॥

आपत्सु मग्नः स्मरणं त्वदीयं करोमि दुर्गे करुणार्णवेशि ।

नैतच्छठत्वं मम भावयेथाः क्षुधा-तृषार्ता जननीं स्मरन्ति ॥१०॥

जगदम्ब! विचित्रमत्र किं परिपूर्णा करुणाऽस्ति चेन्मयि ।

अपराध-परम्परावृतं न हि माता समुपेक्षते सुतम् ॥११॥

मत्समः पातकी नास्ति पापघ्नी त्वत्समा न हि ।

एवं ज्ञात्वा महादेवि! यथायोग्यं तथा कुरु ॥१२॥

इति देव्यपराध-क्षमापन-स्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

देवी-आरती

जय अम्बे गौरी, मैया जय श्यामे गौरी ।
मैया जय मंगलकरणी, मैया जय आनन्दकरणी ॥
तुमको निशिदिन ध्यावत, हरि ब्रह्मा शिवरी ॥ जय. अम्बे.
माँग सिन्दूर विराजत, टीकौ मृगमद को । मैया टीकौ०
उज्ज्वल से दोउ नैना, चन्द्रवदन नीको ॥ जय. अम्बे.
कनक समान कलेवर, रक्ताम्बर राजै । मैया रक्ता०
रक्त पुष्प गल माला, कण्ठन पर साजै ॥ जय. अम्बे.
केहरि वाहन राजत, खड्ग खप्पर धारी । मैया खड्ग०
सुर नर मुनि जन सेवत, तिनके दुःख हारी ॥ जय. अम्बे.

देवी-आरती

कानन कुण्डल शोभित, नासाग्रे मोती । मैया नासा०
 कोटिक चन्द्र दिवाकर, राजत सम ज्योती ॥ जय. अम्बे.
 शुम्भ - निशुम्भ विदारे, महिषासुर घाती । मैया महिषा०
 धूम्र विलोचन नैना, निशिदिन मदमाती ॥ जय. अम्बे.
 चण्ड - मुण्ड संहारे, शोणित बीज हरे । मैया शोणित०
 मधु-कैटभ दोऊ मारे, सुर भयहीन करे ॥ जय. अम्बे.
 ब्रह्माणी रुद्राणी, तुम कमला रानी । मैया तुम०
 आगम निगम बखानी, तुम शिव पटरानी ॥ जय. अम्बे.
 चौंसठ योगिनि गावत, नृत्य करत भैरों । मैया नृत्य०
 बाजत ताल मृदंगा, और बाजे डमरू ॥ जय. अम्बे.

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

तुम ही जग की माता, तुम ही हो भरता । मैया तुम०
 भक्तन की दुःख हरता, सुख-सम्पति करता ॥ जय. अम्बे.
 भुजा चार अति शोभित, वरहु अभयधारी । मैया वर०
 मन वांछित फल पावत, सेवत नर नारी ॥ जय. अम्बे.
 कंचन थाल विराजत, अगर कपूर बाती । मैया अगर०
 श्री मालकेतु में राजत, कोटिरत्न ज्योती ॥ जय. अम्बे.
 ये अम्बे जी की आरति, जो कोई नर गावै । मैया जो०
 कहत शिवानन्द स्वामी, सुख-सम्पति पावै ॥ जय. अम्बे.

इति अम्बेजी की आरती समाप्त ।

क्षमा-प्रार्थना

अपराधसहस्राणि क्रियन्तेऽहर्निशं मया ।
दासोऽयमिति मां मत्वा क्षमस्व परमेश्वरि ॥ १ ॥
आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम् ।
पूजां चैव न जानामि क्षम्यतां परमेश्वरि! ॥ २ ॥
यदत्तं भक्तिमात्रेण पत्रं पुष्पं फलं जलम् ।
निवेदितं च नैवेद्यं तद्-गृहाणाऽनुकम्पया ॥ ३ ॥
मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वरि! ।
यत्पूजितं मया देवि! परिपूर्णं तदस्तु मे ॥ ४ ॥

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

अपराधशतं कृत्वा जगदम्बेति चोच्चरेत् ।
 यां गतिं समवाप्नोति न तां ब्रह्मादयः सुराः ॥ ५ ॥
 अज्ञानाद् विस्मृतैर्भ्रान्त्या यन्न्यूनमधिकं कृतम् ।
 तत्सर्वं क्षम्यतां देवि! प्रसीद परमेश्वरि! ॥ ६ ॥
 कामेश्वरि! जगन्मातः सच्चिदानन्दविग्रहे ।
 गृहाण त्वं स्तुतिमिमां प्रसीद परमेश्वरि! ॥ ७ ॥
 गतं पापं गतं दुःखं गतं दारिद्र्यमेव च ।
 आगता सुख-सम्पत्तिः पुण्याच्च तव दर्शनात् ॥ ८ ॥
 यदत्र पाठे जगदम्बिके मया विसर्ग-विन्दुक्षर-हीनमीरितम् ।
 तदस्तु सम्पूर्णतमं प्रसादतः सङ्कल्पसिद्धिश्च सदैव जायताम् ॥ ९ ॥

क्षमा-प्रार्थना

मोहादज्ञानतो वा पठितमपठितं साम्प्रतं ते स्तवेऽस्मिन् ।
तत्सर्वं साङ्गमास्तां भगवति वरदे! त्वत्प्रसादात् प्रसीद ॥१०॥
यस्याऽर्थं पठितं स्तोत्रं तवेदं शङ्करप्रिये! ।
तस्य देहस्य गेहस्य शान्तिर्भवतु सर्वदा ॥११॥

इति आचार्य-पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रि-संस्कृतं पाठोपयोगि-विविध-
विषयैर्विभूषितै विपरीत-प्रत्यङ्गिरा-विधानं समाप्तम् ।

पुस्तक प्राप्ति स्थानम्

रूपेश ठाकुर प्रसाद प्रकाशन

कचौड़ीगली, वाराणसी-२२१००१

मुद्रक : भारत प्रेस, कचौड़ीगली, वाराणसी-१

हमारे यहाँ की प्रकाशित पुस्तकें एक बार मँगाकर अवश्य पढ़ें।

श्रीसूक्त-पुरुषसूक्त भा०टी०	१५)	दुर्गासप्तशती भा०टी०		जातकभरण भाषा टीका	८०)	विवाह पद्धति भाषा टीका	२५)
शिवमहापुराण भाषा ग्लेज	२००)	सजित्द (मोटे अक्षरों में)	६०)	बृहज्ज्योतिषसार भाषा टीका	७५)	उपनयन पद्धति भाषा टीका	२५)
चाणक्यनीतिदर्पण भा०टी०	२०)	दुर्गासप्तशती भा०टी०	२५)	ताजिक नीलकण्ठी भाषा टीका	७५)	वाशिष्ठी हवन पद्धति भाषा टीका	२५)
रामायण मध्यम भा०टी०	२५०)	दुर्गासप्तशती भाषा ग्लेज	२०)	कर्मविपाक संहिता भाषा टीका	७५)	गणपति प्रतिष्ठा पद्धति भाषा टीका	२५)
रामायण मध्यम मूल दोहा चौपाई	७५)	दुर्गासप्तशती ३२ पेजी मूल	२५)	चमत्कार चिन्तामणि भाषा टीका	८)	धनिष्ठादि पञ्चक शान्ति भा०टी०	२०)
वाल्मीकीय रामायण भाषा	२५०)	दुर्गासप्तशती ६४ पेजी मूल	२०)	भावकुतूहल भाषा टीका	७५)	संक्षेप गणेश चतुर्विंशत कथा भाटी	६०)
अध्यात्म रामायण भा०टी०	२००)	दुर्गाकवच भा०टी०	८)	मुहूर्तचिन्तामणि भाषा टीका	६०)	बृहद चालीसा पाठ संग्रह	३०)
आनन्द रामायण भाषा	२००)	दुर्गाकवच ३२ पेजी मूल	५)	लग्नचन्द्रिका भाषा टीका	४०)	श्रीगीतगोविन्दम् (भा.टी.)	३०)
राघवैक्याम रामायण	८०)	दुर्गा रामायण	१५)	घाघ-भट्टरी की कथावर्तें भा०टी०	२५)	एकादशी माहात्म्य भाषा	१५)
महाभारत भाषा टीका	३००)	मन्त्र-सागर भाषा टीका	७५)	विश्वकर्मा प्रकाश भाषा टीका	७५)	कार्तिक माहात्म्य भाषा	१५)
हरिवंश पुराण (भाषा)	३००)	वगलोपासनपद्धति-बगलामुखी-		स्त्री जातक भाषा टीका	३०)	कार्तिक माहात्म्य भाषा टीका	६०)
भृगुसंहिता भाषा	१५०)	रहस्य भाषा टीका	४०)	शीघ्रवोध भाषा टीका	२०)	हनुमद्-रहस्य भाषा टीका	६०)
प्रेमसागर	७५)	दत्तात्रेय तन्त्र-भाषा टीका	२०)	शिव स्वरोदय भाषा टीका	२०)	गायत्री-रहस्य भाषा टीका	६०)
श्रीमद्भागवत महापुराण भा०टी० लोको	५००)	उद्दीप्त तन्त्र भाषा टीका	२०)	प्रभुविद्या प्रतिष्ठागर्व		बृहत्-स्तोत्र रत्नाकर बड़ा	१००)
श्रीमद्देवीभागवत भाटी सौंकी	६००)	रसरामहोदधि पाँचों भाग	२००)	(सर्वदेव प्रतिष्ठा मयूख)	२५०)	रघुवंश महाकाव्य प्रथम सर्ग	१५)
सुखसागर भाषा मध्यम	२००)	बृहत्पाराशरहोराशास्त्र भा.टी	२००)	कुण्ड निर्माण स्वाहाकार पद्धति	६०)	हितोपदेश मित्रलाभ भाषा टीका	२०)
दुर्गाचर्न-पद्धति भा०टी०	१००)	मानसागरी भा०टी०	१००)	विष्णुयाग पद्धति भाषा टीका	२००)	किराताजुनीयम् १-२ सर्ग भा०टी०	१५)
						सेमेटी ब्रजभाषा १६ भाग	७५)

मन्दिरों एवं धार्मिक उत्सवों में पुस्तक भेंट करने वाले इच्छुक
दानी भक्तजन प्रकाशक से सम्पर्क करें, उन्हें पुस्तकें लागत
मूल्य पर दी जायेंगी।

२००२

प्रकाशक :

रूपेश ठाकुर प्रसाद प्रकाशन

कचौड़ीगली, बाराणसी-१

ISBN 471 542-2392546



Rs. 20/-